रचना शैली अत्यन्त सुन्दर तथा शब्द भण्डार बहुत ही सम्पन्न हैं। बड़े ही आश्चर्य की बात है कि पाण्डेय जी समान सफलता के साथ पूर्ण गम्भीर विषयों का प्रतिपादन तथा सरस परिहास की रचना करते हैं जो इतना नाज़ुक होते हुए भी कभी गन्दा और अश्लील नहीं होने पाता।

**—स्व० आचार्य केशव प्रसाद मिश्र**

पण्डित कान्ता नाथ पाण्डेय ने हिन्दी साहित्य के एक चिर-कालीन अभाव की पूर्ति की है। व्यंग्य-परिहास का जो हिन्दी में नहीं के बराबर था आपने ही विकास किया है। मेरा निश्चित विश्वास है कि हिन्दी साहित्य में इनका अद्वितीय स्थान होगा।

**—स्व० प्रोफेसर राजेन्द्र लाल मेढ़, एम० ए०**

आधुनिक हिन्दी कवियों, लेखकों तथा विद्वानों में श्री पाण्डेय जी का एक विशिष्ट स्थान है। पाण्डेय जी हिन्दी को राष्ट्र भाषा के पदपर आसीन करने वाले आन्दोलकों में से एक हैं।

**—डाक्टर उदयनारायण तिवारी डी० लिट् प्रयाग**

श्री कान्तानाथ पाण्डेय सुप्रसिद्ध कवि हैं। इनकी हास्य रसात्मक कविताओं का अच्छा सन्मान और आदर है।

**—श्री भैरवनाथ झा, शिक्षा संचालक उत्तर प्रदेश।**

पाण्डेय जी संस्कृत और हिन्दी के प्रतिष्ठित विद्वान् और गद्य तथा पद्य दोनों के सुप्रसिद्ध लेखक हैं।

**—पं० श्री नारायण चतुर्वेदी 'श्रीवर'**

शिक्षा संचालक, मध्यभारत

# चूनाघाटी

## नमस्कार

[ चौबीस पंक्तियाँ ]

नाटक-निकासमय नमस्कार,
कविता-विकासमय नमस्कार।
हे उपन्यासमय नमस्कार,
हरदम छपासमय नमस्कार॥ १॥

× × ×

जिसकी दुकान है निष्कलङ्क,
लेखक कवियों के लिए 'बङ्क'।
जो देता समुचित पुरस्कार,
उस बुकसेलर को नमस्कार॥ २॥

× × ×

प्रतिपल प्रसूतिमय नमस्कार,
हे बहुविभूतिमय नमस्कार।
हे पाग सागमय नमस्कार,
हे खेत बाग मय नमस्कार॥ ३॥

× × ×

हे कापी राइट-विकट-रूप,
रायल्टी दायक, टिकट-रूप।
जो छल-विहीन ईमानदार,
उस प्रेस-नरेश को नमस्कार॥४॥

× × ×

प्रतिमास देव, प्रतिपक्ष देव,
कुछ गुप्त देव, प्रत्यक्ष देव।
मिस्प्रिंट रहित मुद्रक उदार,
हे शुद्ध छपन्ता नमस्कार॥ ५॥

विख्यात रूप, विख्यात नाम,

विख्यात धाम, विख्यात काम।

हे चेक-ललाम मय नमस्कार,

हे नगद दाम मय नमस्कार ॥ ६ ॥

## प्रस्तावना

[ बारह पंक्तियाँ ]

लात बरसने पर भी शादी,
करने की मति निर्भय थी ।
तिलक कई फिर जाने पर भी,
जिसकी वय आशामय थी ॥

× × ×

सारा घर जिसका वैरी था,
जो सहता था दुख पर दुख ।
चाँटों से कर लाल लिया था,
हृदय पीट कर अपना मुख ॥

भाई ने भी बन्द कर दिया,
जिसका हुक्का पानी है ।
पाठक पढ़ लो उसी सुकवि की,
हमने लिखी कहानी है ॥

# परिचय

## कवि

[ अड़तालीस पंक्तियाँ ]

सोम सरीखा चमक रहा था,
 वह कवि 'व्योम-विहारी'।
रोम-रोम से निकल रही थी,
 सेण्ट सुगन्धित प्यारी ॥

अपना सब कुछ लुटा दिया,
 मदिरासे स्नेह लगाकर ।
कलित 'कीर्ति' फैला दी है।
 होटल-बिल चुका-चुकाकर ॥

भरा हुआ था उर उस कवि का,
गौरव की चाहों से ।
बेंच दिये घर के गहने,
मित्रों के उत्साहों से ॥

× × ×

नाना-धन उत्सर्ग किया,
'भारत', 'लीडर' मँगवाकर ।
दाढ़ी मुख-लाली रख ली,
रेजर से लहू बहाकर ॥

भीषण भोजन किया भक्ति से,
उदर ठूँस भर डाला ।
पी ब्राण्डी के बीसों बोतल,
स्वाहा कर डाला ॥

अलई पुर के उन कोठों पर,
भजता रहा जड़ों को।
डण्डों से धोया कितने ही,
वार अनेक बड़ों को॥

—

पढ़ता रहा पुस्तके गन्दी,
रद्दी दूकानों की।
महफिल सदा जुटी रहती थी,
घर पर शैतानों की॥

—

सब वेश्या को खिला दिया,
फिर मारा द्रव्य दिवाला।
जगी तवायफ के उर मे तब,
क्रोधानल की ज्वाला॥

उसके एक इशारे पर वे,
मस्त मुसाहब मोटे।
टूट पड़े उस कवि के ऊपर,
लेते अपने सोंटे ॥

—

गूँज रही कोतवाली मे
उनकी अमर कहानी
अबतक चोटों की दिखलाती,
कवि की कमर निशानी।

—

रक्षा की, जब पैर पकड़ कर,
सबने नोट निकाले।
हवालात के नहीं हो गये,
होते सभी हवाले ॥

निकल रही जिसके कमरे से,
वह युवती बड़भागी ।
वहीं कहीं पर छिपा हुआ है,
वह स्वतन्त्र सब त्यागी ॥

---

"कथारम्भ" [ साठ पंक्तियाँ ]

पाठकगण, तुम इसी सुकवि की,
अब शादी का हाल सुनो।
मारपीट, झण्झट झगड़ों का,
बरबादी का हाल सुनो॥

चूनाघाटी नामक सुन्दर,
एक नगर था अति अभिराम!
ब्याह यहीं इस कविवर का था,
हुआ परम शुभ और ललाम॥

ब्याह शादियों में लड़ भिड़कर,
समधी नाहक रोते हैं।
समधी सिधा और नालकी,
तीन कुटिल ही होते हैं॥

इस कारण बारात बीच,
यदि मनमुटाव क्षणभर का हो।
तो तुरन्त तुम बन उदार-मन,
घी का बर्तन ढरका दो॥

फिर देखो कितने प्रसन्न-मन,
बन जाते हैं बाराती!
अभी उबलती जो ज्वाला से,
होती वह ठण्डी छाती॥

कन्या सुन्दर पति को चाहे,
सास धनी, विद्वान् ससुर!
बान्धव कुल उत्तम बस चाहें,
बाराती जलपान प्रचुर॥

कवि के पिता सुधारवाद के,
प्रेमी थे, इसके बेकार।
वेश्या-नृत्य बन्द कर सुन्दर,
कवि-सम्मेलन किया उदार ॥

उस सम्मेलन मे कवियों ने,
गीत सुनाये, सुन्दर छन्द !
नहीं गाँव वालों ने समझा,
उन्हें नहीं आया आनन्द ॥

हो हल्ला था मचा इसीसे,
मारपीट का रग रहा।
था ऐसा हुरदंग देख कर
जिसे विश्व यह दंग रहा ॥

कन्या छोटी थी, इससे था
तय देना फिर द्विरागमन।
किन्तु न माना जब समधी ने,
हुए सभी जन दुःखित-मन॥

क्या होता, फिर विदा कर दिया,
यह केवल लाचारी थी!
लड़के का चाचा रोगी था,
वहू उसे यह प्यारी थी॥

दुलहिन जब ससुराल पधारी,
कविवर ने दस दिन के बाद।
उसे सुनायी थी जो कविता,
वह मुझको है अब तक याद॥

"नाचो नाचो प्यारी वन के मोर!

आज मेरे चाचा का आया है तार,
आता है दस दिन से उनको बुखार।
होंगे न अच्छे मैं कहता पुकार,
मूसर से अब तुम बजाओ सितार!

तुम्हे देखूँ ज्यों चन्दा को देखै चकोर! नाचो०।

चित्त मेरा अधीर, फूला सारा शरीर
अभी कल था फकीर, आज खासा अमीर!

दाँत तुम क्यों रही हो निपोर! नाचो०।

जागी किस्मत अपार, टाँगा बग्घी औ कार,
रुपये चालिस हजार, मैं ही वारिस हूँ यार।

नाक अब न सकोगी सिकोर! नाचो०।

## छुन्ना हज्जाम

मैं पूडी को सब घी लूँगा,
दाल भात की चाह नहीं।
मैं अँचार के लिए अड़ूँगा,
हटो हटो परवाह नहीं।

नून तेल लकड़ी लेने से,
है कुछ भी इन्कार नहीं।
पर घी का इतना कम होना,
है मुझको स्वीकार नहीं।

नापित हूँ, नापित-कुमार,
ठनगन बेमान करूँगा अब।
घी के मिल जाने पर ही,
समधी गुण-गान करूँगा अब॥

यही समय है खा लेने का,
फिर भोजन का तार कहाँ।
कहाँ, कहाँ है गरम मसाला,
सिरका मिला अँचार कहा ?

---

कूद रहे हैं मूस उदर में,
रुकना अब स्वीकार कहां ?
बांट रहा था सब सीधा जो,
वह टेढ़ा कलवार कहा ?

---

कहाँ कहाँ मेरा गोहरा है ?
अब उसको सुलगाऊँगा।
सब बरातियों के पहिले मैं
हँडिया स्वय चटाऊँगा ॥

---

ले जलता अगार एक,

गोहरे में आग लगा दूँगा ।

प्यासा हूँ गुड़ के शर्वत से,

पर क्या प्यास बुझा लूँगा ?

---

अड़ जाऊँगा 'जय दुलहे की'

'जय' कहता अड़ जाऊँगा ।

घी चीनी के लिए डटा हूँ,

समधी से लड़ जाऊँगा ॥

---

छुन्ना नाई इस बरात का,

प्रिय हजाम मस्ताना है ।

घी चीनी उसको लेना है,

या वापस घर जाना है ॥

---

टोके तो मुझ वर-यात्री को
    कौन टोकने वाला है ।
छमक उठा छुन्नानाई अब
    कौन रोकने वाला है ?

---

## वीर बराती

[ अड़तालीस पंक्तियाँ ]

विजया का सब सामान किया
साबुन मल मल कर स्नान किया।
अपना पूरा अरमान किया
सारा समाप्त जलपान किया॥

—

रक्खी निगाह सरदारों पर
दुलहे के नातेदारों पर।
दोनों की सजी कतारों पर
कूदे बर्फी की थारों पर॥

—

"झनझन पटपट" के नारों मे
    झाड़ों की सजी कतारों में ।
पिल पड़े बराती चिल्लाते
    समधी के घर के द्वारों में ॥

---

वह विष था जिह्वा-तीरो मे
    बारात विहारी वीरों मे ।
निर्धन, धनवान, फकीरों में
    जैसा न जहर है हीरों मे ॥

---

उनमें कुछ ऐसी आन रही
    कुछ परम्परागत बान रही ?
जलपान पान के लिए सदा
    वीरों की सस्ती जान रही ।

---

कहते थे—"गाँजा आने दो",
हुक्कों पर चिलम चढ़ाने दो।
विजया को तुरत मँगाने दो,
सिल बट्टे से जुट जाने दो॥

---

देखो फिर मस्ती गालों की,
कुछ करामात तर मालों की।
इस वीर विजयिनी विजया को,
पीकर हम बैठे ठालों की॥

---

खाने को लगड़ा आम नहीं,
है मिर्च नहीं, बादाम नहीं।
अब भीषण यही प्रतिज्ञा है,
होगा विवाद का काम नहीं॥

---

हम विजया के गुण गायेंगे,

हम सिल बट्टा सहलायेंगे।

हम हण्डा नहीं हटायेंगे,

घर भर को मार भगायेंगे॥

---

समधी सम्मुख अड़ जायेंगे,

मन मे न तनिक घबड़ायेंगे।

लड़ जायेंगे लड़ जायेंगे,

समधिन को ले उड़ जायेंगे॥

---

यह कहते थे, चढ़ जाते थे,

मन मे परन्तु घबड़ाते थे।

बाजे घर से कढ़ जाते थे,

बाजे मढ़ हो मढ़ जाते थे॥

---

दोनो का नाम मिटायेंगे,
अपना स्वभाव दिखलायेंगे।
लड़ते लड़ते मर जायेंगे,
जलपान न जबतक पायेंगे॥

---

## धड़क

[ चालीस पंक्तियाँ ]

चेत करो अब चेत करो,
अगुआ-आवाज सुनायी दी !
भागो भागो भाग चलो,
साले की मूँछ दिखायी दी !!

अगुआ यह पूरा पाजी है,
उदर-आग सुलगा दी है !
बात रहेगी यहाँ इसी की,
ऐसी बात चला दी है !!

लपकाता अपना सोंटा वह,
    सत्वर चलता आता था।
बड़े जोर से, सबके ऊपर,
    वह क्रोधी चिल्लाता था॥

उसका क्रोध भरा आनन लख,
    वीर बराती भाग चले!
भोजन भाँग आदि से सत्वर,
    होकर गत—अनुराग चले॥

फिर उसने क्रम क्रम से सबको,
    भिजवाये सामान सकल।
पूड़ी दूध मलाई रबड़ी,
    लड्डू पेडा पान सकल॥

भूल गये सब वीर बराती,
निज महान् अपमान तुरत।
टूट पड़े उन सामानों पर,
खत्म हुआ जलपान तुरत॥

× + ×

ले पाते क्या कुछ भी लड़कर,
थकते रोते भटक भटक।
क्यों न सफल हो इच्छा उनकी,
जिनका ऐसा सुघट घटक॥

# चूना घाटी

भूल गये सब वीर बराती,
निज महान् अपमान तुरत।
टूट पड़े उन सामानों पर,
खत्म हुआ जलपान तुरत॥

× + ×

ले पाते क्या कुछ भी लड़कर,
थकते रोते भटक भटक।
क्यों न सफल हो इच्छा उनकी,
जिनका ऐसा सुघट घटक॥

# चू ना घा टी

भूल गये सब वीर बराती,
निज महान् अपमान तुरत।
टूट पड़े उन सामानों पर,
खत्म हुआ जलपान तुरत॥

× + ×

ले पाते क्या कुछ भी लड़कर,
थकते रोते भटक भटक।
क्यों न सफल हो इच्छा उनकी,
जिनका ऐसा सुघट घटक॥

# चू ना घा टी

## चूनाघाटी

[ अड़तालीस पंक्तियाँ ]

समधी का जय जयकार भरा,
　　हृदयों में ओज अपार भरा।
मेटियों मे खूब अँचार भरा,
　　गलियों में था कतवार भरा॥

---

रस गुल्लों का वह थार भरा,
　　भोजन का सकल सुतार भरा।
तश्तरी और पनडब्बे मे,
　　था पान मसालेदार भरा॥

---

यही यही चूनाघाटी है,
उछल कूद कर खाट लिया ।
बरातियों ने लड़ लड़ कर,
कर अपना सिर खल्वाट लिया ॥

---

इसी व्याह के भय से कितने,
ब्रह्मचर्य के व्रती हुए
हाथ पैर तुडवा कर कितने,
लूले लँगड़े यती हुए ॥

---

अब तक जिससे मुँह टेढ़ा है,
ऐसा ही कुछ काम किया ।
लट्ठबाज समधी लोगों ने,
ऐसा था सम्राम किया ॥

---

खाते समय भात समधी ने,
यहीं विलम्ब लगाया था।
यहीं, यहीं लड़की वालों ने,
निज सर्वस्व लुटाया था।

---

छः सौ आम गिन लिये सबने,
लँगड़े देशी यहीं यहीं।
इतनी अच्छी खातिरदारी,
और हुई थी कहीं नहीं।

---

कूद पड़े सब वीर बराती,
उस बरसाती नाले में।
यहीं तेल, साबुन, सुर्ती ले,
बन्द कर दिये ताले में।

---

पान थूँकते रहे, जरूरत,
पड़ी नहीं पिकदानों की।
उस बारात की कथा कह रहीं,
ईंटे सभी मकानों की।

—

सबके हृदयों पर अंकित कवि—
वर की करुण कहानी है।
अब तक तन से मिटी नहीं,
चोटों की अमर निशानी है।

—

तुम दहेज के लिये मरो,
समधी ने पाठ पढ़ाया था।
इसी गाँव में बारातियों ने,
हलवा खूब उड़ाया था।

—

तुम भी तो उनके वंशज हो,
काम करो, कुछ नाम करो।
कविवर की ससुराल यही है,
झुक कर इसे प्रणाम करो॥

—:※:—

## पनडब्बा

[ अड़तालीस पंक्तियाँ ]

मैं पनडब्बा, मैं पानदान,
    मुझसे भूषित हर खानदान।
मैं पाता हूँ सर्वत्र मान,
    मुझमे कत्था चूना महान्॥

—

मैं पनडब्बा, मैं पानदान,
    मुझसे ही सबकी आन बान।
मेरा ही भाई पीकदान,
    उससे रहना तुम सावधान॥

यों कहता था वह अड़ा हुआ,
    टेबुल के ऊपर पड़ा हुआ।
फूफाजी की आँखों में था,
    वह कई दिनों से गड़ा हुआ॥

—

सब लोगो को ललचाता था,
जब पानी से भर जाता था।
उसके दर्शन से दर्शक के,
मुँह मे पानी भर आता था॥

---

चाँदी का था इससे उसकी,
चाँदी थी, था पूरा निहाल।
था गोलमाल इससे उसके,
कारण था होता गोलमाल॥

---

रख लिया उसे चुपके से पर,
फूफा जी ने भी खूब दाव।
तब तक खुल पड़ा यकायक वह,
हो गया सभी कुर्ता खराब॥

---

उसका खुलना क्या आला था,
मानो बैरगिया नाला था।
यों कत्था गिरने लगा वेग,
ज्यों सोडा गया उबाला था॥

---

कहता था "आओ आओ तुम",
लो पान और यह खाओ तुम।
मुझ महिमामय पनडब्बे को,
कुर्ते मे और छिपाओ तुम॥

---

कपड़े खराब कर देता हूँ,
पूरा कबाब कर देता हूँ।
धोबी का ही केवल हिसाब,
मैं बेहिसाब कर देता हूँ॥

---

ठहरो ठहरो मैं आता हूँ,
तुमको भी मजा चखाता हूँ।
जल्दी से इस कुर्त्ते को अब,
धोबी के घर भिजवाता हूँ॥

---

चूना कत्था जर्दा पाकर,
खिलता सफेद कुर्त्ता पाकर।
धोबिन को कर देता प्रसन्न,
धोबी के घर पर जा जाकर॥

---

सरकार पा सके पेश नहीं,
कुछ कर सकती कांग्रेस नहीं।
मैं पाकिट के क्यों साथ रहूँ,
कुर्ता है मेरा देश नहीं॥

—:❀:—

चन्दौली है यहीं निकट ही,
है ससुराल महामति की ।
महा मूर्ख वर के कारण ही,
इसने सबकी दुर्गति की ।

—

एक बार बारात टिकी थी,
यहीं हुई थी आकर मस्त ।
चली यहाँ से, तब थे बिखरे,
पत्तल पुरवे अस्त व्यस्त ॥

—

आज यहीं उस प्रिय दुकान पर,
पान चबाने आया हूँ ।
और सलाई ले साइकिल का,
लैम्प जलाने आया हूँ ॥

आज इसी छतरी के भीतर,
कुछ सुस्ताने आया हूँ।
हलवाई को इस निद्रा से,
आज जगाने आया हूँ॥

---

सुनता हूँ वह जगा हुआ था,
गाहक के चिल्लाने से।
सुनता हूँ वह जगा हुआ था,
खुमचे के गिर जाने से॥

---

सुनता हूँ वह जगा हुआ था,
मधुमक्खी-गुंजारों से।
सुनता हूँ वह गरज उठा था,
अपने दिये उधारों से॥

---

सजी हुई है मेरी साइकिल,
पर हलवाई सोता है।
उसे जगाऊँगा विलम्ब अब,
समधियान हित होता है॥

---

आज यहीं पर कथा कहूँगा,
रसगुल्ले के थालों की।
आज यहीं पर कथा कहूँगा,
घिसी इकन्नी वालों की॥

---

आज उसी के कला कंद को,
व्यक्त करूँगा गानों में।
आज उसी की जलेबियों की—
कथा कहूँगा कानों में॥

---

पाँड़े तुम भी सुनो कहानी,
निज मुँह मे पानी भर कर।
होती है आरम्भ कथा अब,
बोलो जय श्री लम्बोदर॥

---

सोती थी हलवाइन मोटी,
मुख पर डाले चादर-पट।
गाहक को लेकर हलवाई,
बाहर करता था खटपट।

---

शैतानों से ग्राहक आये,
करते पागल नर्तन से।
खिलने लगे विमल नासापुट,
रसगुल्ले, दलबेसन से॥

---

पौनो पलटो के प्रहार से,
जलेबियाँ सीरा सर मे ॥
फूल उठीं, रसमयी हुई फिर,
फेंकी गयीं कनस्टर मे ॥

—

सीरे को पीकर रसगुल्ले,
लहर उठे थे प्रमुदित मन ।
उनके पास सैकड़ बर्रें,
गूँज रहे थे भनभनभन ॥

—

देखे हलवाई ने पैसे,
निज छोटे से वर्तन में ।
रजत-रश्मिसी फैल उठी,
दशनों की आभा आनन में ॥

—

इसी समय उसके आँगन मे,
कटोरियाँ खन खना उठीं।
डवल मूल्य फँस लेने वाली,
हलवाइन झनझना उठी॥

---

धारण कर गमछा माथो पर,
हाथों मे लेले गोजी
आये कुछ गुण्डे बाराती,
लड़ना था जिनकी रोजी।

---

व्योम विहारी की बारात थी,
आयी, बजते थे बाजे।
इसी हेतु थे यहाँ बन रहे,
रसगुल्ले ताजे ताजे॥

---

"भूतल मिश्र" पिता वर के थे,
उनके भी फूफा आये।
वेही आज "महोदर चौबे",
रसगुल्लों पर ललचाये॥

---

लार टपक उठी चौबे की,
स्वाद मधुर पाने वाली।
गिरी तुरत सुर्ती की डिबिया,
कर से दो आने वाली॥

---

बतलाता था उनका चेहरा,
आज यहाँ भोजन होगा।
और यही भोजन बरात के,
शोधन का साधन होगा॥

---

शोधन की परवाह न की,
चौबे क्या रुकने वाले थे।
अहो! मनोहर रसगुल्लों पर,
अब वे झुकने वाले थे॥

---

अब दुकान में पहुँच गये,
सज्जनता के बन्धन तोड़े।
अन्य बराती भी थे पीछे,
उनके लट्ठ लिये थोड़े॥

---

भीषण लूट हुई चीजों की,
तरह तरह के शोर हुए।
खाओ खूब उड़ाओ ठूँसो,
ऐसे रव घनघोर हुए॥

---

रसगुल्ला यह, यह दलबेसन,
कर में पेड़ा—प्लेट करो।
ठूसो, ठूसो बालूशाही,
सभी पेट की भेंट करो॥

---

लगीं ठिकाने सभी मिठाई,
हलवाई आता है वह।
अरे साथ में दारोगा साहब को,
भी लाता है वह॥

---

भगे बराती दारोगा को,
देख सभी मनमार भगे।
मुँह मे ठूँसे पेड़ा कितने,
ले बर्फी के थार भगे॥

---

गरम गरम कोमल रसगुल्ले,
लुढ़क रहे थे इधर उधर।
एक समोसा बचा हुआ था,
मगदल का दल रहा बिखर॥

---

किसी थार से गिरा जलेबा,
दोने में फँस गया कहीं।
बिखर रहा था हलुआ सोहन,
बना अभी का नया कहीं॥

---

पर चौवे जी रुके नहीं,
अव पान खिलाने वालों से ।
पर चौवे जी झुके नहीं,
अव आँखें दिखाने वालों से ॥

---

छक्का दिया दूकानदार को,
दारोगा को सिखा दिया ।
चौवे कुल में जन्म लिया है,
चौवे हूँ, यह दिखा दिया ॥

---

चेत करो, तुम भी मनुष्य हो
पर मनुष्य तुम ठीक वनो ।
मौन मौन कह दिया सभी से,
मुझ जैसे निर्भीक वनो ॥

---

मैं मनुष्य, तुम भी मनुष्य हो,
पर तुम हो पुरे भकुआ।
और मुझे देखो! मै हू यह,
सम्मुख सण्ड मुसण्ड खडा॥

---

लोगों को कँपकपी छुटी,
घर का निज बद किवाड़ किया।
दारोगा हत बुद्धि हुए जब,
चौवे ने चिग्घाड़ किया॥

---

समधी खजन दूबे ने जब,
चौबे के पागलपन की।
बात सुनी, तब लपके आये,
चौबे की परवाह न की॥

---

भूतल मिश्र चले सुनकर यह—
अपना गोल निराला ले।
डपट उठे खंजन दूबे को
कर में गमछा-माला ले॥

---

"ठहरो खंजन जी, समधी जी!"
लक्ष लक्ष तुम पर वारा।
फूफा जी से कुछ मत बोलो
किसे नहीं भोजन प्यारा?

---

चौबे अपमानित होकर भी,
भोजन करते, बान यही।
कैसे रुक सकते थे ये,
सन्मुख ऐसी दूकान रही॥

---

आगे बढ़ बोले "इनसे पा,
पार नहीं सकते हो तुम।
जिसका चाहे ये खायें,
धिक्कार नहीं सकते हो तुम॥

---

बोले खंजन जी—आये हो,
अच्छे खाने वाले तुम।
मुफ्तखोर हो, माल उड़ाकर,
आँख दिखाने वाले तुम॥

---

"ठहरो ठहरो" क्यों कहते हो,
क्या मैं भोजन भट्ट नहीं।
किन्तु मुफत में, या हौंका पड़,
करता कुछ भी चट्ट नहीं॥

---

बोले भूतल—क्यों लड़ते हो,
मैंने तो कुछ चखा नहीं।
चखने को चौबे जी ने क्या,
बाकी है कुछ रखा कहीं॥

---

बाभन कुल के हे कलङ्क,
धिक्कार तुम्हारी वाणी पर
भोजन मे जो टाँग अड़ाये,
वज्र गिरे उस प्राणी पर॥

---

समधी का सत्कार यही क्या,
बाभन हृदय उदार यही ?
क्या चौबे के साथ तुम्हारा,
है उत्तम व्यवहार यही ?

---

अब तक का अपराध क्षमा,
मुह पर रक्खो अब ताला यह।
मैं चुप हूँ, पर बमक रहा है,
देखो मेरा साला यह ॥

---

बात काट कर बहनोई की,
साले साहब बोल उठे।
भूमि डुलाते हुए अनेकों,
अब मानो मैं 'भूडोल' उठे ॥

---

"थार देखने को हलुवा का,
चौबे जी दुकान अन्दर।
अगर घुस गये और खागये,
रसगुल्ले भी वे जीभर ॥

---

बार बार उसकी चर्चा क्यों,
करते हो, उस खाने का ।
ध्यान नहीं क्या तुम को खंजन !
"लट्ठनिरंजन" काने का ॥

---

लट्ठ निरंजन हूँ, काना हूँ,
मुझसे करो विवाद नहीं ।
चौबे जी चाहे जो खायें,
तुम करना फरियाद नहीं ॥

---

बिना मार खाये तुम सबका,
अब होगा उद्धार नहीं ।
दारोगा को भी देखूँगा,
आवे थानेदार यहीं ॥

पीये गाँजा गहरा हूँ मैं,
खम्भा हूँ धौरहरा हूँ मै ।
काना था ही, अब सधि वधि,
सुनने के हित वहरा हूँ मै ॥

---

लट्ठ घुमा कर मूड लिया,
चेला तुमको क्या, लाखों को ।
अगर मुझे घूरोगे खंजन,
तो फोड़ूँगा आँखों को ॥

---

खञ्जन वढ़े, वढ़े भूतल भी,
युद्ध न रुकने वाला है ।
लट्ठनिरजंन का ऊँचा सिर,
कहीं न झुकने वाला है ॥

---

आगे बढ़ बोले चौबे जी,
लट्ठनिरंजन ! ठहरो तुम ।
मैं निपटूँगा स्वयं अकेले,
दूर हटो या टहरो तुम ॥

---

पीने भर बाकी है सीरा,
इच्छा भर जा पी लो तुम ।
घुसो घुसो तुम भी दुकान में,
खा सारी बर्फी लो तुम ॥

---

लट्ठ निरंज ! पेट तुम्हारा,
खाने को तैयार हुआ ?
तो खाओ मन भर, बाहर मैं,
यह लो पहरे दार हुआ ॥

---

खड़े रहो, लोगों फरके तुम
लड्डू निरजन खायेगा।
खेद कि मेरी तोंद कसी है,
कुछ अब नहीं समायेगा॥

---

देख लूट फिर मिष्टान्नों की,
दारोगा अब क्रुद्ध हुआ।
खंजन हलवाई भी आये,
समारंभ अब युद्ध हुआ॥

---

लिपट पड़े ले लेकर लाठी,
दोनों दल अँधियारे में।
कोई गिरा नांद के अन्दर,
कोई गिरा पनारे में॥

---

बैल बँधा था वहीं पास ही,
भडक उठा, कलवारों का।
रक्षक कौन बनेगा अब इन,
भोजन भट्ट उदारों का?

---

मनुजों का यह हाल देख ये
बैल महाशय भड़क रहे।
उनकी सींगे फड़क रही थीं,
उनके नथुने फड़क रहे।

---

लोग दूर से देख रहे थे,
भय से उनकी चालों को!
सिंह सरीखे दपट रहे थे,
वे उन मनुज शृगालों को।

---

दोनो पक्ष लीन लड़ने में,
उनकी दशा निराली थी।
कौन जानता था चौबे की,
टाँग टूटने वाली थी।

---

तब तक हलवाइन ने देखा,
क्रुद्ध गाय के भाई को।
"चलो चलो खोलो उसको"
कह कर भेजा हलवाई को॥

---

अहा, रपट कर बैल महाशय,
आये, तजा स्वधर्म नहीं।
समधी समधी के रण मे फिर,
किया कौन सा कर्म नहीं ?

---

"हे समधी द्वय" कुल कलंक—
अब लज्जा से तुम झुक जाओ।
खंजन रुको, रुको भूतल तुम,
लट्ट निरंजन रुक जाओ॥"

---

किन्तु बैल के इन भावों की,
लोगों ने परवाह न की।
अहा ! बैल ने भी तबाह,
करने में फिर कुछ आह न की॥

---

उठा लिया सींगों पर उसने,
लट्ठ नि ंजन दूवे को।
उन्हें पटक, चौवे को पटका,
पलट दिया मनसूवे को॥

---

तन का कुर्ता चीथ दिया,
कुछ चबा गया, क्या ऐंठ रही!
टाँगे टूट रह गयीं केवल
आप बचे सौभाग्य यही॥

---

चल रहा वह बण्डोली का,
मनुजों का उपहास किया।
शिक्षित किया युगल समधी को,
दो टाँगों का नाश किया॥

---

चौवेजी की टाँग टूट कर,
टेढ़ी हुई, मलीन हुई।
लट्ठ निरंजन की टँगरी भी,
चोटहिल होकर पीन हुई॥

---

देख दुर्दशा दो टाँगों की,
हास सभी ने मन्द किया।
आह ऊह मचगयी, युगल
दलने अब लड़ना बन्द किया॥

---

"टाँगे टूटीं टाँगे टूटीं",
वण्डोली में शोर हुआ।
धन्य बैल यह कलवारों का;
यह रव चारों ओर हुआ॥

---

हलवाई के दृग अपने को,
लज्जा पट से ढाँप उठे।
टूटी टाँग देख दो दो की,
पति पत्नी अब काँप उठे॥

---

धर्म भीरु समधी खजन तो,
भय कम्पित अविराम हुआ।
लगा सोचने आह! कलंकित,
यह वण्डोली ग्राम हुआ॥

बोल उठा चौबे जी से वह—,
"नहीं तनिक मुँह मोड़ो तुम ।
टाँग तुम्हारी टूटी तो लो,
टाँग हमारी तोड़ो तुम ॥

—

समधी कुल का मैं कलङ्क,
हा जन्म हमारा व्यर्थ हुआ।
फूफा जी ! मेरे कारण ही,
पातक, महा अनर्थ हुआ ॥

सुन यह मौन हुए चौबे फिर,
यह वक्तव्य प्रदान किया ।
"कैसा यह अपमान हमारा,
तूने ऐ बेइमान किया ॥

—

हा, कुछ रसगुल्लों के कारण,
ऐसा हुआ फिसाना है ।
टूटी टाँग और मलहम—
पट्टी का नहीं ठिकाना है

मैं फूफा हूँ समधी का,
मेरा ही तुम्हे यकीन नहीं।
स्वेच्छा से समधी—पुर में,
भोजन को भी स्वाधीन नहीं ?"

---

दाम चुका कर माँग मूँग कर,
खाने मे है शान कहाँ !
समधी पुर में अब स्वतन्त्रता से,
होगा जलपान कहाँ ??

---

यह भी मनमें सोच रहा हूँ,
वदला अभी चुकाऊँगा ।
टाँग जरा अच्छी तो होवै,
फिर मैं लूट मचाऊँगा।।

---

चौवे कुल में जन्म लिया है,
क्या है मेरा हव्य नहीं ।
ऐ समधी खंजन दूवे,
तुम सभ्य नहीं, क्षन्तव्य नहीं।।"

---

लट्ठ निरंजन भी लँगड़ाता,
धाकर मिला कलेजे से।
दो धाकड़ मिल लगे कलपने,
काले पानी भेजे से॥

---

युगल विप्र की टांगें टूटी,
देख दुखी था हलवाई।
"क्या करना समुचित है?" सचमुच,
मति उसकी थी चकरायी॥

---

किया बुरा था चौबे जी ने,
टूट पड़े थे थालों पर!
चपत सैकड़ों की बैठी थी,
हलवाई के गालों पर।

---

फिर भी वह था धीर हृदय का,
बिगडा वह घर वाली पर!
"बैल व्यर्थ तूने खुलवाया"
वह भी उतरी गाली पर!!

---

"लूट लिया सामान उन्होंने,
सब बर्फी की थालों को।
लगे उड़ाने वे रसगुल्लों के,
हँस हँस कण्डालों को॥

---

दुष्ट लोग निकले न निकाले,
घेर लिया सामानों को।
क्यों न बैल से मैं पहुचाऊँ,
क्षति ऐसे शैतानों को॥"

---

दोनों की फिर मलहम पट्टी,
हलवाई ने करवायी।
दोनोंमें रख कर रसगुल्ले,
हलवाइन फिर ले आयी॥

---

कहाँ टाँग टूटी थी उनकी'
पर रसगुल्ला आया था।
यह रसगुल्ला अधिक स्वादु था,
टाँग तुडा कर पाया था॥

---

गयी टाँग पर गया न गौरव
चौबेपन – परिपाटी का ।
यह विरोध भी कारण है,
भीषण–रण चूनाघाटी का ॥

---

हे समधी लोगो ! आगे,
तुम सबकी क्या गति होगी !
कवि के विवाह में यों ही,
क्या टाँगों की क्षति होगी ?

---

[ एक सौ बारह पंक्तियाँ ]

## द्वितीय सर्ग

मिला मिला कर पानी निर्मल,
दूध बेंचता था सरदार।
ज्ञात न था किसको मूसे का,
यह धोखामय दुर्व्यवहार॥

—

अहो। मिला कर भैंस-दूध में
आरारोट अनन्त अपार।
बेंच बेंच कर उदर-दरी का,
करता रहता था विस्तार॥

—

अवसर पाकर कभी मलाई,
खुद सारी खा जाता था।
और गरम जल मिला दूध से,
सबको खूब पिलाता था॥

—

अहो ! अहीरों ने जबसे की,
शुद्ध दूध की बर्बादी।
अश्वारोहण छोड़ देश लग,
गया लादने है लादी॥

---

उसके मारे नवयुवकों के,
चेहरों पर न रही लाली।
पीकर उसका दूध सभी,
जी भर देते उसको गाली॥

---

पर चूनाघाटी के बालक,
जो करते सन्ध्या-चन्दन।
हृष्ट पुष्ट हैं घर में अपने,
गायों का करते पालन॥

---

था एक समय सन्ध्या का जब,
कुछ कुछ बाकी थी सूर्य-किरन ।
अहिराने में थी कूट रही,
कुछ अन्न ग्वाल-बाला 'बुद्दन' ॥

---

वह अमा निशा सी संशोभित,
यद्यपि थी बस अलकतरा सी ।
पर आँखें उसकी बड़ी बड़ी,
थीं गोल गोल पनहब्बा सी ॥

---

आँखों में उसके काजल था,
गालों पर गोदनों की काई ।
दातों पर मिस्सी की रेखा,
उर में भरती थी ठण्ढाई ॥

---

मोटर की पों पों की ध्वनि से,
कान दुखाने वाला कौन ।
नित्य सवेरे इसी राह से,
है यह जाने वाला कौन ॥

---

खबर आ गयी, छिड़ी लड़ाई,
यह बतलाने वाला कौन ।
यह कागज का बोझा लेकर,
है चिल्लाने वाला कौन ॥

---

बोतल में यह दूध बन्द कर,
नीर पिलाने वाला कौन ।
इस्कूली लड़कों को दुर्बल,
देह बनाने वाला कौन ॥

---

घी मे चर्बी मिला मिलाकर,
रोग बढ़ाने वाला कौन ?
आह गरीबी में हमको है,
और सताने वाला कौन ?

—

शुद्ध दूध के बिना देश के,
बच्चे कितने दुर्बल - गात।
नयी जवानी में बुड्ढों से,
कितने बड़े शर्म की बात॥

—

वह इसी भाँति थी भाव–मग्न,
तब तक आया मूसे अधीर।
धीरे से बोला युवती से,
वह कामातुर कम्पित-शरीर॥

—

"गालन कऽ लाली में सेव वा,
कन्धारी वाय अनार' धरा।
अमवा क फाँक मतिन अँखियाँ,
मुहवाँ रसदार वहार भरा॥

---

हमरे सग आवा भाग चला,
अब हमसे तूँ नाता जोड़ा।
हम आपन मेहरारू छोड़ीं,
तूँ आपन मनसेधू छोड़ा॥"

---

यह कह मूसे वढ़ा सभय,
उस सती सिंहनी के आगे।
जागा उसके कर का मूसर,
उस मूसर के जौहर जागे॥

---

झगड़ अहीर की लड़की थी,
विपतू की पोती, व्याली सी।
मूसे पर मूसर तान उठी,
दोहरी वन्दूक दुनाली सी॥

---

कहा कडक कर दूँ दस मूसर,
या छोड़ेगा शैतानी।
बोला मूसे माफ करो अब,
तुम्हें कहूँगा परनानी॥

---

जब सुनते थे चूनाघाटी,
वाले लडके ऐसी वात।
आकर मूसे जैसों को थे,
स्वयं जमा देते दस लात॥

---

## तृतीय सर्ग

[ अट्ठासी पंक्तियाँ ]

ऐसा चूनाघाटी ग्राम,
चन्दौली के निकट ललाम।
जहाँ बसे थे खंजन राम,
जो सबसे करते संग्राम ॥

× × ×

सबसे अधिक खेत खरिहान,
सबसे अधिक जमीन मकान।
लकड़ी की करते दूकान,
और खूब खाते थे पान ॥

× × ×

लड़की के थे वे ही बाप,
और बड़े क्रोधी थे आप।
जभी क्रोध जाता था व्याप,
तभी दे दिया करते शाप ॥

× × ×

लड़के भी उनके थे चार,
पहला गुण्डों का सरदार
मझला झूठा महा लबार,
सबसे छोटा परम उदार ॥

उससे बड़े तीसरे राम!
करते दिल्ली में थे काम।
बड़े कमासुत थे अभिराम।
खाते थे पिश्ता बादाम॥

---

लड़की के ये चारों भ्रात,
जब मिलकर करते उत्पात।
फिर कहने की क्या थी बात,
मानो आता झंझावात॥

---

सुन कर चौबे जी का काम,
वह चन्दौली का संग्राम।
खाया खूब जहाँ बेदाम,
हुई जहाँ टाँगे बेकाम॥

---

लड़के बोले - यह अन्धेर!
ये लड़के वाले हैं शेर!
नहीं लूटने में कुछ देर।
देवें हमें तिलक वे फेर॥

---

किया उपद्रव इतना आह।
उनके घर अब होगा व्याह?
नहीं! नहीं!! अब रक्त-प्रवाह,
करने का हमको उत्साह!!

---

ये समधी हैं या शैतान!
सभी लूट बैठे दूकान!!
हमें खूब समझा जजमान।
पण्डों के ये हुए समान!!

---

कैसे उनके फूफाराम!!
डरा कि जिनसे सारा ग्राम।
कैसा उनका पाजी काम।
कैसा विकट महोदर नाम!!

---

कैसा उनका भारी पेट,
कैसे सबको दिया चपेट।
आज करेंगे उनसे भेंट,
उन्हें करेंगे मटियामेट॥

---

कितनी वे पीते हैं भाँग,
कितनी सकते मार छलाँग।
कैसी उनकी भीषण माँग,
कैसे उनकी टूटी टाँग॥

---

कैसे वे वाराती लोग,
आये यहाँ लगाने भोग।
लगा लूटने का अभियोग,
उनके पिटने का संयोग॥

---

ये सब हैं पूरे पाजी,
लड्डू-लोभी लल्ला जी।
आन का सत्तू आन का घी,
भोग लगावें बाबा जी॥

---

कैसा ब्याह, कहाँ का मान।
कैसा भोजन या जलपान !!
बड़े दुष्ट हैं ये मेहमान!
हम न करेंगे कन्या-दान ॥

---

कैसा काला है दामाद।
झोंटे वाला है दामाद !!
बैठा ठाला है दामाद।
बड़ा निराला है दामाद !!

---

भाँट सरीखा है दामाद,
उसे कवित्त कई हैं याद।
कहता जिनको छायावाद,
हुआ उसे सचमुच उन्माद ॥

---

उसको निज लडकी देकर,
काका अपने जीवन भर।
रोवेंगे बस भोकर भोकर,
हमको बस इतना ही डर ॥

---

एक न बाई जी! लाये,
नहीं भाँड़ आने पाये।
नौटंकी से घबड़ाये,
कत्थक तक हैं क्या लाये॥

---

ये सब हैं सुधार वादी,
अँग्रेजिहा हैं लाला जी।
सुनते हैं, सचमुच, हाँ जी,
होवेगी कवित्तबाजी॥

---

बक झक कर जब बाकी तीनों,
लड़के चुप हुए, गये घर में।
तब नम्बर तीन सपूत चले,
बाहर लाठी लेकर कर में॥

---

## चतुर्थ सर्ग

[ साठ पंक्तियाँ ]

मैं हूँ साला मैं हूँ साला,
हैं भैंस तुल्य अक्षर काला ।
पर ठाट वाट निज रग ढंग से,
लगता साहब मतवाला ॥

---

मैं फेंकू पडित का नातो,
मैं साढ़े पाँच हाथ लम्बा ।
है उदर अन्न हित सदा विकल,
जैसे पोष्टाफिस का वम्बा ॥

---

हूँ दिल्ली में सर्विस करता,
चूना घाटी अब आया हूँ ।
बिगड़ैल वराती लोगों का,
करता मैं तुरत सफाया हूँ ॥

---

ये डाकू हैं या बाराती,
रसगुल्ले खाते लूटलूट।
सब मुस्ख, पेट इनका भड़ार,
भोजन पर पड़ते तुरत टूट॥

---

घर पर स का हौल नहीं,
पर यहाँ चाहिए दलवेसन।
लड़की वाले को दें उजाड़,
यह प्रण कर ये आते दुर्जन॥

---

ये हृदय हीन, ये नर पिशाच,
क्या इन्हें नहीं लड़की कोई।
हर एक ऐंठ दिखलाता है,
हर एक बना है बहनोई।।

---

कितना पवित्र यह शुभ अवसर,
उसमें झगड़ा, उसमें ठनगन!
है व्याह प्रेम का परिचायक,
उसमें फिर क्यों यह गदहापन॥

---

लड़की वाला होने से ही,
क्या कोई छोटा होजाता?
यह कैसी विकट विषमता है,
मैं भेद नहीं इसका पाता॥

---

पर जो सीधे से बोलेगा,
उस पर अपने को वारूँगा।
जो मुझको ऐंठ दिखावेगा,
उसकी मैं मूछें उखाड़ूँगा॥

---

यह कहता था चिल्लाता था,
जनवासे में घुस जाता था ।
सिगरेट का धूँआ इधर उधर,
मदमस्ती से फैलाता था ॥

—

जो नेग माँगता नाई है,
वह कहाँ गया दुखदायी है ।
घर में तो सूखा चना नहीं,
खाने अब चला मलाई है ॥

—

मैं नहीं किसी का कर्जदार,
जो बने महाजन बाराती ।
ये सारे के सारे देखो,
हैं बने नवाबों के नाती ॥

—

उसकी बातें सुन सुन सारे,
बाराती जन बिल-बिला उठे ।
लड़की वाले, नौकर चाकर,
इस ओर यहाँ खिल खिला उठे ॥

---

जब सुना पिता ने कन्या के,
बुलवा कर उसको डाँट दिया।
बासी पूडी तरकारी को,
सारी बरात मे बाँट दिया॥

---

फिर भी चबूतरे पर अपने,
बैठा साला गुर्राता था ।
जब एक बराती दीख पड़े,
चुपके से मुँह बिचकाता था ।

---

## पञ्चम सर्ग

इधर रात बीती, नभ मे,
आगमन हो गया रवि का।
और व्याह भी अहा! होगया,
व्योमविहारी कवि का॥

---

सुश्री से "श्रीमती" हो गयीं,
आज इमिरिती देवी।
सत्य हुए इतने दिन पर अब,
कवि जी के सपने भी॥

---

वह देखो खिचड़ी खाने,
आता है अब जामाता।
मुच्छमुण्डा मुखड़ा उसका,
कैसी सुषमा है पाता!!

---

मोटे उसके लटक रहे हैं,
कृशित युगल कन्धों पर।
केशों में ग्रीवा अन्तर्हित,
नहीं तनिक है फोंफर॥

---

आंखों पर चश्मा है स्वर्णिम,
कमर कमान सरीखी!
गालों में सुन्दर गड्ढे,
है पीठ मचान सरीखी!!

---

खिचड़ी खाने बैठ गया,
दोनों घुटनों के बल से।
देख हंस पड़े लोग, कई तो
सचमुच पड़े उछल से॥

---

बोला कोई "ऐ कविवर !
बैठे हैं खिचड़ी खाने ?
सम्मेलन में या बैठे,
कविता हैं आप सुनाने ?

---

दिखलायी पड़ता क्या यह,
खिचड़ी का थाल नहीं हैं ।
भोजन की मुद्रा में बैठो,
यह पण्डाल नहीं है ॥

---

भोजन के आरंभ हेतु,
अब होने लगी मनावन ।
खंजन जी ने रुपये रक्खे,
थाल निकट एक्यावन ॥

---

पर कवि जी थे मौन, शान्त,
नीरव, निश्चेष्ट निरंजन ।
परम प्रगति वादी बनते थे,
अब थे शुद्ध सनातन ॥

---

तिलक, दहेज, दक्षिणा का जब,
आ जावे शुभ अवसर ।
तब प्राचीन प्रथा का ही,
अनुयायी होना हितकर ॥

---

बहुत देरके बाद सुकवि,
बोले तब खिचड़ी खाऊँ ।
वायुयान जब एक आपसे,
मै सुन्दर पाजाऊँ ॥

---

वायुयान ? हा वायुयान,
लेना ही मेरा व्रत है ।
नभ मे ही उड़ते रहना,
कवि का कविता—सम्मत है ॥

---

पर जब 'वायुयान' की चर्चा से,
हो सब खिसियाए ।
तब 'मोटर' पर उतर तुरत,
श्री व्योम विहारी आये ॥

---

मोटर से भी लगे भड़कने,
किन्तु श्वसुर-पुर वाले ।
'रिक्शा' से सन्तोष प्रकट,
कर उठे सुकवि मतवाले ॥

---

'रिक्शा' भी महँगा सौदा सुन,
हुए साइकिल-स्नेही ।
पर सज्जन जी बिगड़ पड़े,
"साइकिल" चर्चा सुनते ही ॥

---

बोले वे "रही साइकिल से,
और न कहीं सवारी ।
कितनों को काना लंगड़ा,
करती है यह हत्यारी ॥

---

अपने से अपने दमाद को,
साइकिल कभी न दूँगा।
"साइकिल पर चढ़ना न कभी"
सबसे सौ वार कहूँगा॥

---

झुक जाती है कमर, फेफड़े,
सड़ जाते हैं इससे।
सुनो सुनो तुम ऐ बरातियों
बस बचना इस विष से!!"

---

बहुत हुआ खिचड़ी पर आखिर,
झगड़ा शोर झमेला।
खंजन जी ने दिया सुकवि को,
एक पुराना ठेला॥

—:*:—

## षष्ठ सर्ग

[ एक सौ बत्तीस पंक्तियाँ ]

ज्योन विहारी–पिता महाशय,
भूतल मिश्र मनोहर ।
उनके भी फूफा चौबे विख्यात,
विशेष "महोदर" ॥

---

भूतल के साले प्रसिद्ध दूबे,
श्री "लट्टू निरजन" ।
भूतल के चाचा प्रसिद्ध,
लोभी पण्डितवर "मंगन ॥

---

मगन के मौसा श्री "लोढू,
लोढ़ू के भी काका ।
रामखेलावन, जिनको परिचय,
सब प्राचीन प्रथा का ॥

---

सभी भात खाने जुट आये,
लिये साथ में नाई ।
चकित रह गये उन्हें देखकर,
सारे लोग लुगाई ॥

---

सात सात ये व्यक्ति भात,
खाने को जुट आये हैं।
कौन जानता था कि लात
खाने को जुट आये हैं॥

---

जब उन लोगों के समक्ष,
भोजन जा चुका परोसा।
चावल दाल, कचौड़ी पूड़ी,
हलवा और समोसा॥

---

तब फूफा ने कहा कि लाओ,
बैलों की दो जोड़ी।
सुनते ही हँस पड़े कई,
लड़के यह पीट थपोड़ी॥

---

बोले वे—फूफा जी क्या,
वे बैल करेंगे भोजन ?
अरे आपलोगों के भोजन,
हित है यह आयोजन।

---

"एक बैल ने तो यह गति की,
टूटी टाँग तुम्हारी।"
कहा किसी ने यह चुपके से,
उठे विहँस नरनारी॥

---

और महोदर जी फिर भोजन,
तज कर बाहँ उठाकर।
बोले-क्यों अपमान कर रहे,
घर पर हमें बुलाकर।

---

कुछ रसगुल्ले के कारण ही,
टाँग तोड बैठे हो।
बड़े बने हो पैसे वाले,
किस मद मे ऐंठे हो॥

---

लड़की वालों मे से कोई,
पढ़ा लिखा था वे
आप क्रुद्ध होकर नाहक
बरसावें मन उमगे

---

आप अतिथि हैं मान्य हमारे,
पूजनीय हैं भारी।
जब सम्बन्ध जुड़ा यह प्यारा,
कैसी दुनिया दारी॥

---

छोटों की भी उचित सदा,
मानीं बातें हैं जातीं।
बच्चों की तोतली बोलियाँ,
किसे नहीं हैं भातीं॥

---

हम क्या ऐसे निन्द्य नीच जो,
तब अपमान करेंगे।
उसके मान्यों का, जिसको,
हम कन्या दान करेंगे?

---

ब्याह—काज मे तो सदैव,
परिहास हास होता है।
उससे बुरा मान कर कोई,
धैर्य न यों खोता है॥

---

"बड़े मिले उपदेशक मुझको,"
बोले लट्ठ निरंजन !
बड़े हास करने आये हैं,
बड़े बने हैं सज्जन !!"

---

"ऐसे गधे बहुत हैं मैंने,
देखे और चराये।"
सुनकर यह सब लोग हँस पड़े,
वक्ता तब शर्माये॥

---

पर धीरे धीरे क्रमशः
यह वाद बढ़ा जाता था !
कोई अण्ट सण्ट बकता था,
कोई मुस्काता था !!

---

लड्डू निरजन ने समझा—
सब मुझ पर मुस्काते हैं।
मैं काना हूँ, अतः मुझी पर,
हँस हँस सुख पाते है॥

× + ×

और इसी पर कुछ कुवाच्य वे,
कह बैठे अज्ञानी।
बिगड़ उठे समधी के लड़के—
बोले—यह शैतानी॥

× × ×

सीधे से हो नहीं मानते,
और तने जाते हो।
हो सियार सेभी बदतर,
पर शेर बने जाते हो॥

× × ×

कैसे भात नहीं खाओगे।
नहीं भात खाओगे?
खाओ भात, भात खाओ तुम,
नहीं लात खाओगे॥

× × ×

यह सुनते ही दोनो दल से,
छिड़ा युद्ध फिर भारी ।
बिखर गये पूड़ी पापड़ सब,
दाल भात तरकारी ॥

---

चौबे जी ने बड़े वेग से,
समधी को दे मारा ।
यद्यदि निरपराध था बेशक,
वह समधी बेचारा ।

---

उसकी भी टाँगों में आयी चोट,
देख घर वाले ।
टूट पड़े बाराती लोगों पर,
डण्डा छाता ले ।

---

लोढ़ जी की एक आँख मे,
आयी चोट करारी ।
भूतल को भूतल पर पटका,
सबने बारी बारी ॥

---

मंगन जी भी इस दगे मे,
पिटे, दाँत दो टूटे ।
पहले से भी सुन्दर थे ही,
काले और कलूटे !

---

एक टाँग भी टूटी उनकी,
चोट कमर में आयी ।
आँगन मैं औंधे लेटे थे,
रोके हुए रुलाई ॥

---

सीधे थे, रण से समका,
करते थे सदा निवारण ।
आकर यहाँ भात खाने,
वे भी पिट गये अकारण ॥

---

कर सकते थे वे 'सकार' का,
बस 'फकार' उच्चारण ।
वावदूक थे, नहीं कारसके,
मौन देर तक धारण ॥

खजन जी को हाथ जोड़ कर
किया प्रणाम अनूठा।
दिखलाया पग का अपने,
फिर टूटा हुआ अँगूठा ॥

---

अपनी फिर फकार भाषा में,
फफक फफक कर बोले।
फट् फट् फूट पड़े हों मानो,
फुफ्फा फाड़ फफोले ॥

---

## सप्तम सर्ग [ छन्दन पंक्तियाँ ]

"सुनता हूँ तू समधी है,
लडके का साफ़ कसूर है।
मुझको नाहक़ पिटवाया,
कैसा कठोर तव उर है॥

सम्मुख का भोजन छीना
वह पूडी और समोसा।
बैठा कर भोजन पर यों,
देना न उचित है वागा॥

कल भी मैंने खाया था,
थोडा ही जैसे तैसे।
सोरहो दण्ड लवन यह,
सन्तोष करूँ मैं कैसे?

मैं आज सवेरे से ही,
बैठा था लिये नयागी।
तब तक झाँके कर बैठा,
सिर पर सेनान सवागी॥

सौ बार कहूँगा मैं तो,
अनुचित यह बात सरासर।
मैं सत्य सत्य कहता हूँ,
हलुआ था खूब तरातर॥

---

उसका, सारे भोजन का,
यों सत्यानाश हुआ है।
मेहमानो को लतियाना,
क्या यह इन्साफ हुआ है॥

---

दो जोडी बैल भले ही,
देना स्वीकार न तुमको।
धोखा देगा सचमुच ही,
यह अत्याचार न तुमको॥

---

कम से कम अब तो भोजन,
फिर से सारा मँगवाओ।
स्वागत फिर सादर करके,
सब को भोजन करवाओ॥

---

है आज रात में सुन्दर,
होने को कवि सम्मेलन।
स्वागताध्यक्ष जिसके हैं,
होने को श्री शिवनन्दन॥

---

उफमें ये दाँत तुडा कर,
कैफे फुनने बैठूँगा ।
ये दाँत बड़े फुन्दर थे,
कैफे उन पर ऐठूँगा ॥

---

कम फे कम दो बछ्या ही,
दे दो तुम भात खवाई ।
कुछ बात फुनो मेरी भी,
मत बन जाओ कपफाई" ॥

---

सुनकर यह फकार मय भाषा,
सबको अति आनन्द हुआ ।
और सभी लडने वालों का,
लड़ना भी अब बन्द हुआ ॥

---

क्षमा माँग सबसे समधी ने,
स्नेह—वारि से नहलाया ।
फिर से किया नया आयोजन,
फिर से भोजन मँगवाया ॥

---

सब उड़ाया फिर लोगों ने,
भात साथ पूडी हलवा ।
दो बछवे तो उन्हें मिले ही,
एक मिला मोटा पँडवा ॥

## अष्टम सर्ग

[ एक सौ बत्तीस पंक्तियाँ ]

पत्नी के पावन पाँव पूज,
रानी—पद को कर नमस्कार।
उस मण्डी वाली कानी को,
साली—पद को कर नमस्कार॥

---

उस तम्बाकू पीने वाले के,
नयन याद कर लाल लाल॥
लगभग दालान हिला देता,
जिसका खों खों खों खों कराल॥

---

दे अभिव्यक्ति को सुन्दरता,
अतिशय प्रिय प्राणी प्राणी का।
चित्रित करता हूँ मन्दहास,
निर्मल कविता कल्याणी का॥

---

मुझको न किसी का भय बन्धन,
क्या कर सकते अखबार सभी !
मेरी रक्षा करने को है,
यह मेरी कलम तयार अभी !!

---

क्षणभर फाउण्टेन मे स्याही भर,
कर सुकवि वृन्द को नमस्कार !
स्वागताध्यक्ष करने बैठा,
अपना स्वागत भाषण तयार ।।

---

घन घन घन घन घन गरज उठी,
घण्टी टेबुल पर बार बार ।
चपरासी सारे जाग पड़े,
जागे मनिआर्डर और तार ।।

---

कविवर श्री नारायण जागे,
पाँडे सतनारायन जागे !
दफ्तर मे जगमोहन जागे,
वेदव जागे, बच्चन जागे ।।

---

जागे कसौंधिया के कपूत,
प्रेस के कम्पोजीटर जागे ।
दोहे जागे, छप्पय जागे,
कविता के सब अक्षर जागे ॥

---

लिखते लिखते अपना भाषण,
स्वागताध्यक्ष फिर ठहर गया ।
लाया चपरासी वह बोतल,
जिसको था लाने शहर गया ॥

---

चपरासी घस आया ही था,
लेकर गिलास, बोतल, झोली ।
तब तक फूफा जी आ पहुँचे,
लेकर कुछ कवियों की टोली ॥

---

सुनकर चरमर जूतों का स्वर,
बोतल के मुहँ से काग उठा।
सब एक घूँट मे पी डाला,
आँखों मे छा अनुराग उठा॥

---

छत पर गीली चादर ओढ़े,
रजनी भर यह तो सोता था।
घर भर में वर्तन तोड़ फोड़,
मर्कट का नर्तन होता था॥

---

सोकर उठने पर खाता था,
रसगुल्ला काला जाम यहाँ।
सन्ध्या को फिर गमछा पहने,
खाता था लँगड़ा आम यहाँ।

---

घर के अन्दर मदिरा पीकर,
करता था सारे अनाचार।
बाहर खद्दर का कोट पहिन,
लेक्चर देता था धुवांधार॥

---

"इस शुभ विवाह में" वह बोला,
कवियों का सम्मेलन होगा।
छायावादी कवि आयेंगे,
उनका भी मूक रुदन होगा॥

---

बोतल से सोडा उछल उछल,
टेबुल पर था गिरता छलछल।
वह कूद कूद लेक्चर देता,
सब कहते थे उसको पागल॥

---

चिट पर चन्दा दाताओं के,
लिखता जाता था नाम सकल ।
फिर गला फाड़ चिल्लाता था,
बतलाता था प्रोग्राम सकल ॥

---

वह आया था सम्मेलन के,
सारे दुखड़े यों रोने को ।
या आया करने साफ तुरत,
मगही पानों के दोनों को ॥

---

कल के नीचे पल पल जाकर,
कुल्ला करता, मुँह धोता था ।
फिर भी मुख पर उसके निशान,
कत्थे चूने का होता था ॥

---

स्वागताध्यक्ष खुद लेक्चर दे,
बनता जाता था मतवाला ।
जैसे हिन्दी जग है प्रमत्त,
पीकर नूतन हाला प्याला ॥

—

टेबुल पर अपने हाथ पटक,
डायस् के ऊपर घूम घूम ।
कोलाहल था करता अपार,
पागल मनुष्य सा झूम झूम ॥

—

भाषण के अन्दर खो खो कर,
खाँसने जभी लगता अपार ।
झाँकती उसे थीं महिलाएँ,
चिक उठा उठा कर बारबार ॥

—

दर्शक कोलाहल करते थे,
मानो चिल्लाते भिन्न मधुप।
पर किसे सुनायी पड़ता था,
उसका वह चिल्लाना "चुपचुप"॥

---

धमसे जब गिर पड़ता था वह,
था तोंद नहीं सकता सम्हार।
मुसका उठती थीं महिलाएँ,
हँस उठते थे लड़के लबार॥

---

वह चिल्लाता ही जाता था,
कहता था अच्छा आज शकुन।
जो चन्दा दे दोगे तुरन्त,
कर देगा सारा काज शकुन।

---

बिछवा दो कपड़े तूल लाल,
टँगवा दो माला फूल लाल।
रखवा दो कुर्सी स्टूल लाल,
रंगवा दो सारा स्कूल लाल॥

---

तुम दौड़ो दौड़ो रखवा लो,
कवियों का सब समान यहीं।
तुम भागो भागो ऐ लड़को,
लाओ सारा जलपान यहीं॥

---

'जलपान' शब्द को सुनते ही,
लड़के सारे भरभरा उठे।
मुहँ में तो पानी भर आया,
सब के रोयें फर फरा उठे॥

---

दोनों से और कसोरों से,
बन गया वहीं पूरा होटल ।
स्वागताध्यक्ष भी चकराया,
हो गया चित्त उसका चञ्चल ॥

---

तब तक सब कविगण आ पहुँचे
ले गट्ठर लोटा डोर सकल ।
लोटे ले ले कर निकल पड़े,
सत्वर खेतों की ओर सकल ॥

---

सब शयन कक्ष की जय बोले,
दावत समक्ष की जय बोले ।
उस कार्यदक्ष की जय बोले,
स्वागताध्यक्ष की जय बोले ॥

---

पूडी लाओ, पेड़ा लाओ,
पापड़ लाओ, लाओ मगदल।
लाओ रबड़ी, यह बोल उठा,
पुरवा पुरवा पत्तल पत्तल ॥

---

करने लगे शेष शिव नन्दन,
स्वागत की तैयारी।
कवियों को लाने को भेजा,
एक्की, एक्का, लारी ॥

---

## लाछम सर्ग
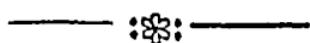
[ साठ पंक्तियाँ ]

कविगण पर दर्शक टूट पड़े,
  वटुए पर कलछुल पौनों से !
घोड़ा गिर पड़ा, गिरा एक्का,
  कविगण बिछ गये बिछौनो से !!

---

कवि से कोई कवि जूझ पड़ा,
  मुक्कों लातों ललकारों से ?
मच गया शोर पण्डाल बीच,
  कलवार लड़े कलवारो से ?

---

टोपी गिर पडी, गिरे साफे,
  हो लुण्ड मुण्ड सब झुण्ड गिरे ।
कितने झोटा वाले कविगण,
  कितने दढ़ियल मुछ मुण्ड गिरे !!

---

कोई उल्टा उत्तान गिरा,
  कोई फुटबाल समान गिरा।
कोई कवि यों औंधा आया,
  पनडब्बा से ज्यों पान गिरा ॥

बिगड़े थे सबके ठाटबाट,
  करते थे क्षमाप्राप्ति अभिनय !
कुछ हार जीत का पता नहीं,
  क्षणइधर विजय, क्षण उधर विजय !!

स्वागताध्यक्ष भी देख रहा,
  केवल सुख से न तमाशा था ।
वह दौड़ दौड़ चिल्लाता था,
  वह पानपीक का प्यासा था ।

चढ़ कर चौकी पर कूद कूद,
　　करता थाली—रखवाली था !
रावण को दावे काँख वीच,
　　मानो वह वानर वाली था !

चौकोर चौकड़ी भर भर कर.
　　चेतक बन गया निराला था !
ढाला था, जिससे तनिक नहीं,
　　लगता जाड़ा या पाला था !

जो तनिक हाथ में थाल मिली,
　　लेकर तुरन्त उड़ जाता था !
दर्शक की पुतली फिरी नहीं,
　　मुँह पान भरा मुड जाता था !

कौशल दिखलाया चालों मे,
गोरे चेहरों में, कालों में !
निर्भीक पान भर गालों में,
थूकी सुर्ती परनालों मे !!

है यहीं रहा, अब यहाँ नहीं,
वह वहीं रहा, अब वहाँ नहीं !
थी जगह न कोई जहाँ नहीं,
किस कवि मस्तक पर कहाँ नहीं !!

फिर चुपके से वह ठहर गया,
मानों गवईं से शहर गया !
पर एक वार जाते जाते,
कवि-सम्मेलन पर घहर गया !!

था कुछ न सभापति बोल रहा,
मानो मुँह अन्दर फोड़ा था !
इस भाँति मञ्चपर था बैठा,
ज्यों आसमान पर घोड़ा था ॥

कविगण कहते थे पान कहाँ,
दर्शक कहते थे पान कहाँ।
फिर स्वयं सभापति बोल उठे,
है पान कहाँ, है पान कहाँ!

कपड़े हो जावेंगे खराब,
खिसको खिसको बेमान गिरा।
था शोर—पीक से बचो बचो,
पिकदान गिरा पिकदान गिरा !!

## दशम सर्ग

[ एक सौ दो पंक्तियाँ ]

तब सम्मेलन आरम्भ हुआ,
देखा लोगो ने आठ हुआ ?
क्रम क्रम से कवि लोगों का तब,
अद्भुत ही कविता-पाठ हुआ ?

कवि एक चढ़े थे हर्षमग्न,
खाकर प्रियपान तमोली का !
इसलिए छन्द पढ़ने आये,
पाकर सुख सुर्ती-गोली का ॥

हम उसी छन्द को आज यहाँ,
प्रिय पाठक तुम्हें सुनाते हैं ?
कैसी सुन्दर कविता वह थी,
बानगी तुम्हें दिखलाते हैं—

"अरे, बता कितने दिन से तू,
लगा रहा है पान तमोली।
यही प्रश्न जग के उर अन्तर,
मचा रहा तूफान तमोली॥

पान सुपारी कत्था चूना,
जिनके विना लगे मुँह सूना!
नये नेह का नया नमूना,
प्रेमी को वरदान तमोली॥

देख सोमारू का वह साला,
खा लेता जब पान मसाला।
है बिखेर देता मतवाला,
मुख पर मृदु मुस्कान तमोली॥

तेरी ही वह देख पड़ोसिन,
साठ साल की बुधिया धोबिन।
पान सुपारी मुख में ठूँसे,
लगती है शैतान तमोली !!

उस तमाल-वर्णा के मुखपर,
हँसो विराज रही यों सुन्दर।
यथा तमाखू की टिकिया में,
सुलग रही हो आग निरन्तर ॥

बचा बचा तू बचा शीघ्रही,
यह अपनी दूकान तमोली !

तेरे इस दूकान—किनारे,
खड़े रईसन को को गनिहै ?
जिनके वदन वाद्य से निर्गत,
पिच पिच की मधुर ध्वनि है ?
सड़क सुन्दरी लाल हो उठी,
देख इसे नादान तमोली ॥

पण्डे और पुजारी आते,
लीडर खद्दरधारी आते ?
नौकर हैं सरकारी आते,
लम्पट चोर जुआरी आते ॥
करता तू समान स्वागत है,
सब तेरे मेहमान तमोली ?

गावों की तो बात छोड दे,
रस छीमी के हैं वे आदी ?
होता तू न अगर नगरों मे,
हो जाती उनकी बरबादी ?

बचा अतिथि सत्कार वहाँ है,
तुझसे ही मतिमान तमोली ??
अरे बता कितने दिन से है,
लगा रहा तू पान तमोली !"

तब जनता अध्यक्ष ने, कहा समोद अपार ?
चर भी हैं कविवर वही, छन्द पढ़ें दो चार ??

चरित नायक ने इसके बाद,
पढ़ी जो कविता अद्भुत आप्त ?
उसी को उद्धृत कर हम यहाँ,
सर्ग यह करते समुद समाप्त ?

हँस पड़े उसको सुन सब जन।
आप भी होवें प्रमुदित-मन ॥

"हे विश्ववन्द्य, हे श्वसुर सदय ?
तेरी लीला अद्भुत अपार ?
तुमने निज पुत्री ही देदी,
हे पुत्री के पालक उदार ?

तू कोठे पर, कुर्सी पर भी,
छत पर, आँगन मे वर्तमान ।
तू घर भर में, जग की सासें,
कहतीं—"जो है सो तू महान् ।"

इस कविता का अक्षर अक्षर,
प्रभु तेरा ही गुण-गान प्रचुर ।
मेरे छन्दो का वर्ण वर्ण,
कह रहा निरन्तर 'ससुर' 'ससुर' ।

पहिले तिलक के एक, पीछे,
तू अनेक ललाम है !
तू सास साली और साला—,
सवलित सुखधाम है !!

जलपान का आनन्द तो,
तव गेह मे पाया गया !
इससे तरातर माल वाला,
तू सदा गाया गया !!

आरम्भ होता तिलक से,
दर्शन त्वदीय अपार है !
इस हेतु तू त्रैलोक्य का,
सुन्दर तिलक अविकार है !!

जो प्रकृति में रत हैं तुझे—
वे तत्ववेत्ता कह रहे !
सब सुता-स्रष्टा भी तुझी को,
ब्रह्मवेत्ता कह रहे !!

तू द्रव्य देता, भोज्य देता,
भाग्य—भाजन है प्रभो !
तू मुफ्त में सिनेमा दिखाता,
तू महाजन है प्रभो ॥

हे ससुर ! हे शुभ स्नासमय,
कृतकृत्य कर अब कार से !
दबती निरन्तर जा रही है,
साइकिल मम भार से ॥

नाना सदृश तू माल दे,
दस पाँच खेत विशाल दे।
जलपान पान निमित्त या,
दस पाँच सौ हर साल दे ॥

## एकादश सर्ग

[ छिहत्तर पंक्तियाँ ]

नाना नौकर चाकर से,
वह भरा दिव्य उपवन था।
रजनी हँसती झुरमुट में,
चिर जागृत सम्मेलन था ?

चिक के पर्दे से छनकर,
आती धूएँ की रेखा ?
हृत्पत्तल पर बनती थी,
रबड़ी की सुन्दर रेखा !!

छोटे छोटे पीढ़ों पर,
हलवाई गण हिलते थे ?
हाथों मे उनके मञ्जुल,
कलछुल पौने खिलते थे ??

नीलम पल्लव की छवि से,
थी ललित मजरी—काया ।
मानो स्याही के सर में,
था उनको गया डुबाया ॥

निज गन्ध पिला कवि कवि को,
था बना रहा मतवाला !
ललपान-भवन मधुशाला,
कविगण मधुपों की माला ॥

पौनों कड़ाहियो का था,
सगीत मधुर-धुनि रुनभुन ?
भूखे कवि ऊँघ रहे थे,
यह प्रिय स्वर-लहरी सुनसुन ?

थी मगदल में मादकता,
मोदक में मोद भरा था !
कवि-करुण अरुण आँखों में,
मानो अजमोद भरा था ॥

पाकर आँधी के झोंके,
पत्तल सब भाग रहे थे !
टाँगे फैलाये अपनी,
कविगण सब जाग रहे थे ॥

जब बरस किरण मतवाली,
रवि नभ में लगे विहँसने !
तब इधर लोग पत्तल पर,
पूरी लग गये परसने ॥

कवि एक बिहार निवासी,
जो थे शिकार के प्रेमी ।
जिनको डकार से चिढ़ थी,
जो थे रकार के प्रेमी ॥

---

वे बोले—हे पाँरे जी,
थोरी रबरी मँगवाओ ।
चीनी न सही गुर ही दो,
मत गरबर यहाँ मचाओ ॥

---

पकरो पकरो पापर को,
आँधी में भागा जाता ।
जैसे हो कोई घोरा,
दौरता सरक पर आता ॥

---

मगन जी उनसे बोले—,
ऐ कवि जी फुनिये फुनिये ।
पापड़ टूट चूर हुआ है,
अब बैठ फान्त फिर धुनिए ॥

---

अफ्फोफ ! दूफरा पापड,
चौके में कहाँ, वताओ ।
फचफच कहता हूँ तुम फे,
मत नाहक फोर मचाओ ॥

---

सुन युगल व्यक्ति की बातें
हँसने लग गये घराती ।
"फुर्ती" फाँकना निरख कर,
खिल खिला उठे बराती ॥

---

इस भाँति चार दिन रहकर,
लौटी वारात भवन को ।
वह्वे भूतल ने रक्खे,
पडदा देकर मगन को ॥

---

जिसकी आशा न कभी थी,
वह भी हो गया अहाहा।
होकर वह रहा विवाहित,
जो अब तक था अनव्याहा ॥

---

तब से बिवाह शादी में,
कविसम्मेलन परिपाटी।
चलपड़ी, लोग कहते हैं,
अद्भुत है चूनावाटी ॥

---

## ❀ हमारी प्रकाशित पुस्तकें ❀

२।।) आदिवाला
२।।) जवान
३) लवँग
५।।) नीलम
२।।।) चकेवा
५) कुंकुम
४) पगडण्डी
२।।) धड़कन
२।।) मुमताज
२।।) पायल
२) नीलमणि
५) चौरंगी
२।।) सहारा
२।।) भँवरा
२।।) आहुति
२।।) बसेरा
२।।) त्याग
२) नरमेध
२।।) चाँदनी

२।।) इशारा
२।।) निर्मोही
४) मंजिल
२।।) पागल
२।।) पपिहरा
२।।) पारस
२।।) ममता
२) महामाया
२।।।) खँडहर
२) सोलह अगस्त
२।।) दो किनारे
२।।।) सांवरिया
४) अँगड़ाई
२।) मनोरमा
३।।) राजकुमारी
२) नदी में लाश
१।।।) गरीब
२।) हाहाकार
२।।) प्यासी आँखें

२।।) पपीहा बोले आधी रात
३) विप्लवी वीरांगना
२) प्यासी तलवार
२।।) नर और नारी
१।।) होटल में खून
१।।।) बड़े चाचा जी
१।।।) राजपूतनन्दिनी
१।।) साहसी राजपूत
३) पीली कोठी
२।।) झाँसी की रानी
२।।) मंदिर की नर्तकी
२।।) काली घटा
१।।।) अमरसिंह राठौर
२।।) दागी की बेटी
१।।।) प्रेम के आँसू
२।।) कागज के फूल
१।।) उलटा घर
५।।) घर की लाज
१।।) पृथ्वीराज चौहान

| | | |
|---|---|---|
| १।) जवानी का नशा | ४॥) आत्मदाह | ४) भारत |
| १।।।) अदल-बदल | १।।।) रोटी | ३॥) |
| ४॥) चूड़ियाँ | २॥) तारों भरी रात | २) सरदार भगतसिंह |
| २॥) संसार की भीषण राज्यक्रान्तियाँ | ३॥) ललकार | २॥) स्वास्थ्य और व्याय |
| | ४) बहते आँसू | २।।।) रक्त की प्यास |
| ३।) चितवन | ३॥) काजल | ३॥) मकड़ी का जाल |
| १।।।) अदल-बदल | ३) जला डालो | २॥) बन्धन |

पता:—

चौधरी एण्ड सन्स,

बनारस १

वर्फी की भी थार कहीं पर,
उलझ उलझ अड जाती थी।
चॉप गिरे, वे बचे किन्तु,
जिन पर निगाह पड जाती थी॥

---

थालों की झन् झङ्कारों से,
हलवाइन की हुकारो से।
कोलाहल मच गया भयकर,
हलवाई—ललकारो से॥

---

एक मात्र चौवे जी अब भी,
बैठे थे दुकान अन्दर।
माल तरातर उड़ा रहे थे,
स्वय पसीने से थे तर॥

---

सिर की चुटिया हिल उठती थी,
पीढ़ा करता था चर मर ।
चाट रहे थे अब वे सीरा,
रसगुल्ले का चपर चपर ॥

---

सीरे के ही साथ लार थी,
गलफर से चूती तर तर ।
देख उन्हें दारोगा जी को,
चढ़ा तुरत ही शीत ज्वर ॥

---

पीढे पर पल्थी मारे वे,
हँटे हुए थे धम धूसर ।
दारोगा जी हलवाई से,
बात कर रहे थे बाहर ॥

कल कल से चौंके चौबे जी,
अलसायी आँखें खोलीं ।
मुस्काये कुछ शरमाये भी,
सुन दारोगा की बोली ॥

---

पर शर्माकर, पुनः खा गये,
तीन पाव आजादी से ।
तनिक न की परवाह किसी की,
रंचक डरे न वादी से ॥

---

पर कोलाहल पर कोलाहल,
किलकारों पर किलकारें ।
उनके कानो मे पड़ती थीं,
धिक्कारो पर धिक्कारें ॥

---

खा न सके, उठपड़े क्रोध से,
उठा हाथ मे थार लिया।
विकल हो उठे कितने दर्शक,
जब डकार—विस्तार किया ॥

---

हलवाई भागा दुकान तज,
दारोगा बेमान गिरे।
चौबे जी की वह डकार सुन,
अच्छे खासे ज्वान गिरे॥

---

धीरे से उतरे चौबे जी,
ओठों पर मुस्कान लिये।
लगे घूरने कितने उनको,
कितने आये पान लिये ॥

---